बहाउल्लाह
के
निगूढ़ वचन

प्रथम खण्ड

अरबी से

वह महिमाओं की महिमा है !

यह वह है जो महिमा के साम्राज्य से उतरा, बल और शक्ति की जिह्वा से उच्चरित हुआ और विगत अवतारों के लिए प्रकट किया गया। हमने उसके अन्तर्निहित सार को लिया और इसे संक्षिप्तता का वस्त्र पहनाया, दया के चिन्हस्वरूप धार्मिक जनों को प्रदान किया, ताकि वे ईश्वर की संविदा के प्रति निष्ठावान बनें, अपने जीवन में उसके विश्वास को सार्थक करें, और चेतना के साम्राज्य में दिव्य गुणों के रत्न प्राप्त करें।

हे चेतना के पुत्र !

मेरा प्रथम परामर्श यह है : एक शुद्ध, दयालु एवं प्रकाशमय हृदय धारण कर, ताकि तेरी संप्रभुता पुरातन, अमिट और अनन्त हो।

{1}

हे चेतना के पुत्र !

मेरी दृष्टि में समस्त वस्तुओं में सर्वाधिक प्रिय न्याय है, उससे विमुख न हो, यदि तुझे मेरी अभिलाषा है, तो इसकी अवहेलना न कर, ताकि मैं तुझमें विश्वास कर सकूँ। इसकी सहायता से तू अपनी आखों से देखेगा न कि दूसरों की आँखों से, स्वयं अपने ज्ञान से जानने लगेगा न कि अपने पड़ोसी के ज्ञान से। अपने हृदय में इस पर विचार कर; कि तुझे कैसा होना योग्य है। वस्तुतः न्याय तेरे लिये मेरा उपहार है और मेरी प्रेममयी-दयालुता का प्रतीक है। अतः इसे अपने नेत्रों के सम्मुख धारण कर।

{2}

हे मनुष्य के पुत्र !

अपने स्मरणातीत अस्तित्व और अपने सार की पुरातन अनन्तता में छिपा हुआ, मैं तेरे प्रति अपने प्रेम को जानता था; इसलिए मैंने तेरी रचना की, तुझ पर अपनी छवि को उत्कीर्ण किया और तुझ पर अपने सौन्दर्य को प्रकट किया।

{3}

हे मनुष्य के पुत्र !

तेरा सृजन मुझे प्रिय था, इसलिए मैने तेरी रचना की। अतः, तू मुझसे प्रेम कर, ताकि मैं तेरा नाम ले सकूँ और तेरी आत्मा को जीवन की चेतना से भर सकूँ।

{4}

हे अस्तित्व के पुत्र !

मुझसे प्रेम कर, ताकि मैं तुझसे प्रेम करूं। यदि तू मुझसे प्रेम नहीं करेगा, तो मेरा प्रेम भी तुझ तक कदापि नहीं पहुंच सकेगा। हे सेवक, इसे जान ले।

{5}

हे अस्तित्व के पुत्र !

तेरा स्वर्ग मेरा प्रेम है, तेरा स्वर्गिक आवास, मुझसे तेरा पुनर्मिलन। उसमें प्रवेश कर और विलंब न कर। यह वह है जो तेरे लिए हमारे उच्च लोक में और हमारे उदात्त साम्राज्य के लिए नियत किया गया है।

{6}

हे मनुष्य के पुत्र !

यदि तू मुझसे प्रेम करता है, तो स्वयं से विमुख हो जा; और यदि तू मेरी इच्छा का जिज्ञासु है, तो अपनी इच्छा का विचार न कर; ताकि तू मुझमें विनष्ट हो जाए और मैं सदैव तुझमें विद्यमान रहूँ।

{7}

हे चेतना के पुत्र !

तेरे लिए शांति नहीं है, सिवाय इसके कि तू स्वयं का त्याग कर दे और मेरी ओर अभिमुख हो, क्योंकि तेरे लिए उचित यह है कि तू मेरे नाम में गौरव करे, न कि अपने नाम में, मुझमें अपना भरोसा रखे, न कि अपने आप में, क्योंकि मैं चाहता हूँ कि मैं अकेला ही सभी कुछ से अधिक चाहा जाऊँ।

{8}

हे अस्तित्व के पुत्र !

मेरा प्रेम मेरा दुर्ग है; जो उसमें प्रवेश करता है वह सुरक्षित और संरक्षित रहता है और जो उससे विमुख होता है निश्चय ही भ्रष्ट और नष्ट हो जाता है।

{9}

हे दिव्यवाणी के पुत्र !

तू मेरा दुर्ग है; उसमें प्रवेश कर, ताकि तू सुरक्षित निवास कर सके। मेरा प्रेम तुझमें निहित है, इसे जान ले, ताकि तू मुझे अपने निकट पा सके।

{10}

हे अस्तित्व के पुत्र !

तू मेरा दीपक है और तुझमें मेरा प्रकाश है। तू उसमें से अपनी काँति प्राप्त कर और मेरे अतिरिक्त किसी अन्य की खोज न कर। क्योंकि मैंने तुझे समृद्ध बनाया और उदारतापूर्वक अपनी कृपा तुझ पर बरसाई है।

{11}

हे अस्तित्व के पुत्र !

शक्ति के हाथों से मैंने तेरी रचना की और बल की उंगलियों से मैंने तुझे सृजित किया; और तेरे अन्तर में मैंने प्रकाश के सार को रख छोड़ा है। तू इसमें संतोष कर और अन्य की खोज न कर, क्योंकि मेरी कृति संपूर्ण है और मेरा आदेश अटल है, इस पर शंका न कर, और न ही इसमें संदेह कर।

{12}

हे चेतना के पुत्र !

मैंने तुझे सम्पन्न बनाया है, फिर तू स्वयं को दरिद्रता के तल पर क्यों ला रहा है ? मैंने तुझे कुलीन बनाया है, फिर तू स्वयं को क्यों गिरा रहा है? ज्ञान के सार से मैंने तुझे अस्तित्व दिया, फिर तू मेरे अतिरिक्त किसी अन्य से ज्ञान की खोज क्यों करता है ? प्रेम की माटी से मैंने तुझे गढ़ा, फिर तू किसी अन्य के साथ क्यों व्यस्त हो गया ? अपनी दृष्टि अपने अंदर डाल ताकि तू मुझ शक्तिशाली, सामर्थ्यवान तथा स्वःनिर्भर को अपने अंदर स्थित पा सके।

{13}

हे मनुष्य के पुत्र !

तू मेरा साम्राज्य है और मेरा साम्राज्य कभी नष्ट नहीं होता। फिर भला तुझे अपने नष्ट होने का भय क्यों है ? तू मेरा प्रकाश है और मेरा प्रकाश कभी भी बुझाया नहीं जा सकता, फिर भला तू बुझ जाने का भय क्यों करता है ? तू मेरी महिमा है और मेरी महिमा कभी क्षीण नहीं होती; तू मेरा परिधान है और मेरा परिधान कभी भी जीर्ण-शीर्ण नहीं होता। अतः, मेरे प्रति अपने प्रेम में दृढ़ रह, ताकि महिमा के लोक में तू मुझे प्राप्त कर सके।

{14}

हे दिव्यवाणी के पुत्र !

अपना मुखड़ा मेरी ओर कर और मेरे अतिरिक्त अन्य सब कुछ त्याग दे, मेरी सत्ता शाश्वत है, उसका अन्त नहीं। यदि मेरे अतिरिक्त तू किसी अन्य को खोजता है, तो समझ ले कि भले ही तू सदा-सर्वदा सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को खोजता रहे तो भी तेरी खोज व्यर्थ होगी।

{15}

हे प्रकाश के पुत्र !

मेरे अतिरिक्त अन्य सब कुछ भुला दे और मेरी चेतना से संलाप कर। यह मेरी आज्ञा का सार है, अतः, इस ओर अभिमुख हो।

{16}

हे मनुष्य के पुत्र !

तू मुझसे संतुष्ट रह और अन्य किसी सहायक की खोज न कर, क्योंकि अन्य कोई नहीं, मात्र मैं ही सदैव तेरी आवश्यकता को पूरा कर सकता हूँ।

{17}

हे चेतना के पुत्र !

मुझसे वह न मांग जिसे हम तेरे लिए नहीं चाहते। तेरे हित हमने जो आदेशित किया है, उस पर संतोष कर, क्योंकि यही तेरे लिए लाभप्रद होगा, अगर तू उससे स्वयं को संतुष्ट कर ले।

{18}

हे अद्भुत दृष्टि के पुत्र !

अपनी स्वयं की चेतना की एक श्वाँस मैंने तुझमें फूँक दी है, ताकि तू मेरा प्रेमी बन सके। फिर, भला क्योंकर तूने मुझे त्याग दिया और किसी अन्य को अपना प्रियतम बना लिया है ?

{19}

हे चेतना के पुत्र !

मेरा अधिकार तुझ पर महान है, इसे भुलाया नहीं जा सकता। तेरे प्रति मेरी अनुकम्पा यथेष्ठ है, इसे छिपाया नहीं जा सकता। मेरे प्रेम ने तेरे हृदय में अपना निवास बना लिया है, इसे छिपाया नहीं रखा जा सकता। मेरा प्रकाश तुझमें प्रकट है, इसे धुंधलाया नहीं जा सकता।

{20}

हे मनुष्य के पुत्र !

मैंने अपनी देदीप्यमान महिमा के वृक्ष पर तेरे लिए चुने हुए फल झुला रखे हैं, जबकि तूने उनसे मुंह फेर लिया है और हीन वस्तुओं से स्वयं को संतुष्ट कर लिया है? तू उनकी ओर लौट जो तेरे लिए उच्च साम्राज्य में उपयोगी होंगी।

{21}

हे चेतना के पुत्र !

मैंने तुझे उत्तम उत्पन्न किया, फिर भी तूने स्वयं को अधम बना लिया है। तू उसी के लिए प्रयास कर जिसके लिए तेरा सृजन किया गया।

{22}

हे सर्वोच्च के पुत्र !

मैं शाश्वतता की ओर तेरा आह्वान कर रहा हूँ, फिर भी तू उसकी खोज कर रहा है जो नाशवान है। किसने तुझे हमारी इच्छा से अपनी इच्छा की खोज में लगा दिया है?

{23}

हे मनुष्य के पुत्र !

अपनी सीमाओं का उल्लंघन न कर, न उस वस्तु का दावा कर जो तेरे योग्य नहीं है। शक्ति और बल के स्वामी अपने ईश्वर के मुखारबिंदु के समक्ष धरती पर अपना माथा टेक।

{24}

हे चेतना के पुत्र !

निर्धन पर शेखी न बघार, क्योंकि मैं उसके पथ पर उसका मार्गदर्शन करता हूँ और जब तुझे कुचेष्टा करते हुए देखता हूँ तब सदा-सर्वदा के लिए तुझे हतबुद्धि कर देता हूँ।

{25}

हे अस्तित्व के पुत्र !

तू स्वयं के दोषों को भला कैसे भूल गया और दूसरों के दोष निकालने में अपने आपको व्यस्त कर लिया ? जो ऐसा करता है वह मेरे द्वारा श्रापित होता है।

{26}

हे मनुष्य के पुत्र !

जब तक तू स्वयं पाप कर्म में लिप्त है, दूसरे के पापों का विचार भी न कर। यदि तूने इस आज्ञा की अवलेहना की तो तू शापित बन जाएगा और इसका साक्षी स्वयं मैं हूँ।

{27}

हे चेतना के पुत्र !

तू इस सत्य को जान ले: वह जो लोगों को न्यायनिष्ठ बनने का आदेश देता है किन्तु स्वयं अन्याय में लिप्त है, वह मेरा नहीं है, चाहे वह मेरे नाम को ही क्यों न धारण करता हो।

{28}

हे अस्तित्व के पुत्र !

जिस आरोप को तू अपने ऊपर लगाया जाना पसंद नहीं करता उसे किसी अन्य आत्मा पर आरोपित न कर, और तू वह न कह जो तू नहीं करता। तेरे लिए यह मेरा आदेश है, इसका तू पालन कर।

{29}

हे मनुष्य के पुत्र !

मेरा कोई सेवक यदि तुझसे कुछ मांगे तो देने से इन्कार न कर, क्योंकि उसका मुखड़ा मेरा ही मुखड़ा है; ऐसा कर तू मेरे समक्ष लज्जित होगा।

{30}

हे अस्तित्व के पुत्र !

अंतिम लेखा-जोखा हो उससे पहले तू प्रतिदिन अपने कर्मों का निरीक्षण कर लिया कर, क्योंकि मृत्यु का आगमन अघोषित होगा और तुझे अपने कर्मों का विवरण प्रस्तुत करने को कहा जायेगा

{31}

हे सर्वोच्च के पुत्र !

मैंने मृत्यु को तेरे लिए आनंद का संदेश्वाहक बनाया है। फिर तू दुख क्यों करता है? मैंने प्रकाश को तुझ पर तेज डालने हेतु रचा है। फिर तू स्वयं को छिपाया क्यों है?

{32}

हे चेतना के पुत्र !

आनन्ददायक प्रकाश के सुसमाचार हेतु मैं तेरा स्वागत करता हूँ, आनन्द मना ! मैं तुझे पवित्रता के प्रांगण में आमंत्रित करता हूँ; उसमें प्रवेश कर, ताकि तू सदा-सर्वदा के लिए शांति में निवास कर सके।

{33}

हे चेतना के पुत्र !

पावनता की चेतना ने तुझे पुनर्मिलन का आनन्ददायक सुसमाचार दिया है; फिर भला तू दुःखी क्यों है ? शक्ति की चेतना तुझे उसके धर्म में पुष्ट कर रही है, फिर तू स्वयं को छिपाता क्यों है ? उसके मुखारबिंदु का प्रकाश तेरा मार्गदर्शन कर रहा है, फिर तू भटक कैसे सकता है ?

{34}

हे मनुष्य के पुत्र !

सिवाय इसके कि तू हमसे दूर है, दुखी न हो। सिवाय इसके कि तू हमारे निकट आता जा रहा है और मेरी ओर लौट रहा है, किसी अन्य बात से आनंदित न हो।

{35}

हे मनुष्य के पुत्र !

अपने हृदय की प्रफुल्लता पर आनंद मना, ताकि तू मुझसे मिलन तथा मेरे सौन्दर्य को प्रतिबिम्बित करने के योग्य बन सके।

{36}

हे मनुष्य के पुत्र !

मेरे सौन्दर्यमय परिधान से स्वयं को विहीन न कर, और मेरे आलौकिक निर्झर के अपने भाग से वंचित न हो, कहीं ऐसा न हो कि तू सदा-सर्वदा प्यासा रह जाए।

{37}

हे अस्तित्व के पुत्र !

मुझसे प्रेम के लिये मेरे विधानों का पालन कर और यदि तू मेरी इच्छा की खोज करता है तो स्वयं को अपनी इच्छाओं से विमुख कर ले।

{38}

हे मनुष्य के पुत्र !

यदि तू मेरे सौन्दर्य से प्रेम करता है तो मेरी आज्ञाओं की अवहेलना न कर, और यदि तू मेरी सुप्रसन्नता प्राप्त करना चाहता है तो मेरी सलाह को न भूल।

{39}

हे मनुष्य के पुत्र !

यदि तू अन्तरिक्ष की विशालता को तीव्रता से चीरता हुआ निकल जाए और आकाश के विस्तार को छान मारे तो भी हमारे आदेश के प्रति समर्पित हुए बिना व हमारे मुखमण्डल के समक्ष विनयशील हुए बिना तुझे संतुष्टि नहीं प्राप्त होगी।

{40}

हे मनुष्य के पुत्र !

तू मेरे धर्म का यशगान कर ताकि मैं अपने महानता के रहस्यों को तुझ पर प्रकट करूँ और शाश्वतता के प्रकाश के साथ तेरे ऊपर चमकूँ।

{41}

हे मनुष्य के पुत्र !

मेरे समक्ष स्वयं को विनीत कर ले,, ताकि मैं कृपापूर्वक तुझ तक आगमन करूँ। मेरे धर्म की विजय के लिए उठ खड़ा हो, ताकि जब तक धरती पर है तू विजय को प्राप्त कर सके।

{42}

हे अस्तित्व के पुत्र !

मेरी धरा पर मेरा नाम ले, ताकि अपने आकाश में मैं तुझे याद करूँ, इस प्रकार मेरे और तेरे नेत्रों को सान्त्वना मिलेगी।

{43}

हे सिंहासन के पुत्र !

तेरा श्रवण मेरा श्रवण हैं, तू उससे सुन, तेरी दृष्टि मेरी दृष्टि है, तू उससे देख, ताकि तू अपनी अंतरात्मा में मेरी उच्चतम पावनता का साक्ष्य दे सके और मैं स्वयं तेरे उदात्त पद का साक्षी बनूँ।

{44}

हे अस्तित्व के पुत्र !

मेरी इच्छा से संतुष्ट और जो भी मैंने आदेश दिया है, उसके प्रति कृतज्ञ होकर, मेरे मार्ग में एक शहीद की वीरगति पाने की अभिलाषा रख, ताकि गरिमा के छत्र तले, महिमा के मण्डप में तू मेरे साथ विश्राम कर सके।

{45}

हे मनुष्य के पुत्र !

मनन कर और सोच ले। क्या तेरी इच्छा अपनी शय्या पर मर जाने की है या अपना लहू धूल पर बहाकर, मेरे मार्ग में शहीद होने की, और इस प्रकार सर्वोच्च स्वर्ग में मेरी आज्ञा का प्रकटरूप तथा मेरे प्रकाश का प्रकटकर्ता बनने की है ? हे सेवक, तू सही न्याय कर।

{46}

हे मनुष्य के पुत्र !

मेरे सौन्दर्य की सौगंध ! तेरा अपने लहू से अपने केशों को रंगना मेरी दृष्टि में ब्रह्माण्ड की रचना और दोनों लोकों के प्रकाश से अधिक महान है। हे सेवक इसे प्राप्त करने का प्रयास कर !

{47}

हे मनुष्य के पुत्र !

प्रत्येक वस्तु का एक चिह्न है। प्रेम का चिन्ह है मेरे आदेशों में दृढ़ता तथा मेरी परीक्षाओं में धैर्य धारण करना।

{48}

हे मनुष्य के पुत्र !

सच्चा प्रेमी कष्ट की कामना उसी प्रकार करता है जिस प्रकार विद्रोही क्षमा और पापी दया की याचना करता है।

{49}

हे मनुष्य के पुत्र !

यदि मेरी राह में तुझ पर विपत्ति न टूट पडें, तो तू उन लोगों के मार्ग का अनुसरण भला कैसे करेगा जो मेरी इच्छा से संतुष्ट हैं ? मुझसे मिलन की इच्छा में यदि तुझे परीक्षायें न आ घेरें, तो भला मेरे सौन्दर्य के लिए अपने प्रेम में तू प्रकाश की प्राप्ति कैसे कर सकेगा ?

{50}

हे मनुष्य के पुत्र !

मेरी विपत्ति मेरी अनुकम्पा है, बाह्यरूप में यह अग्नि और प्रतिशोध है, परन्तु आंतरिक रूप में यह प्रकाश और दया है। उसमें शीघ्रता कर ताकि तू शाश्वत प्रकाश तथा एक अविनाशी चेतना बन सके। यह मेरा तुझको आदेश है, तू इसका पालन कर।

{51}

हे मनुष्य के पुत्र !

यदि तुझे समृद्धि प्राप्त हो, हर्षोन्मादित न हो, और यदि दुर्भाग्य आ पड़े, शोकाकुल न हो, क्योंकि दोनों ही गुज़र जायेंगी और बनी नहीं रहेंगी।

{52}

हे अस्तित्व के पुत्र !

यदि दरिद्रता तुझे पर आ पड़े,, दुःखी न हो, क्योंकि यथासमय वैभव का स्वामी तुझ तक पहुँचेगा। अधोगति से भय न कर, क्योंकि महिमा एक दिन तुझ पर आसीन होगी।

{53}

हे अस्तित्व के पुत्र!

यदि तेरा हृदय इस शाश्वत, अविनाशी साम्राज्य, और इस पुरातन एवं शाश्वत जीवन की ओर प्रवृत्त हो, तो इस नाशवान और चलायमान साम्राज्य का त्याग कर दे।

{54}

हे अस्तित्व के पुत्र !

स्वयं को इस सांसार में लिप्त न रख, क्योंकि अग्नि से हम स्वर्ण को परखते हैं, और स्वर्ण से हम अपने सेवकों का परीक्षण करते हैं।

{55}

हे मनुष्य के पुत्र !

तुझे स्वर्ण की इच्छा है और मैं इससे तेरी मुक्ति चाहता हूँ। इसकी प्राप्ति पर तू स्वयं को धनवान समझता है, और मैं इससे पवित्रता में ही तेरी सम्पन्नता मानता हूँ। मेरे जीवन की सौगंध! यह मेरा ज्ञान है, और वह तेरा भ्रम हैं; कैसे मेरा मार्ग तेरे मार्ग से मेल खा सकता है ?

{56}

हे मनुष्य के पुत्र !

मेरी सम्पदा मेरे निर्धनों को प्रदान कर, जिससे स्वर्ग में तू अविनाशी महिमा के कोषों से अमिट वैभव तुझे प्राप्त हों। फिर भी मेरे जीवन की सौगंध ! तेरी आत्मा का उत्सर्ग कर देना एक और भी अधिक गौरवपूर्ण वस्तु है यदि तू मेरे नेत्रों से देख सके।

{57}

हे मनुष्य के पुत्र !

अस्तित्व रूपी शरीर मेरा सिंहासन है; इसे सभी वस्तुओं से निर्मल रख, ताकि मैं वहां प्रतिष्ठापित हो सकूँ और मैं वहाँ निवास करूँ।

{58}

हे अस्तित्व के पुत्र !

तेरा हृदय मेरा निवास है; मेरे अवतरण के लिए इसे स्वच्छ रख। तेरी चेतना मेरा प्राकट्यस्थल है; मेरे प्रकटीकरण के लिए इसे स्वच्छ रख।

{59}

हे मनुष्य के पुत्र !

अपने हाथ मेरे वक्षस्थल पर रख, ताकि मैं तेजोमय तथा प्रकाशमान हो, तुझ से ऊपर उठ सकूँ।

{ 60}

हे मनुष्य के पुत्र !

मेरे आकाश में आरोहण कर, ताकि तू पुनर्मिलन के आनन्द की प्राप्ति करे, और अनश्वर महिमा के पात्र से अनुपम मदिरा का पान कर सके।?

{61}

हे मनुष्य के पुत्र !

अनेक दिन बीत गये जिनमें तूने स्वयं को अपनी भ्रांतियों और निराधार कल्पनाओं में ही व्यस्त रखा। तू कब तक अपनी शय्या पर पड़ा सोता रहेगा ? अपनी निद्रा से अपना सर

उठा क्योंकि सूर्य मध्याकाश तक आ पहुँचा है, कदाचित सौन्दर्य के प्रकाश द्वारा वह तुझ पर चमके !

{62}

हे मनुष्य के पुत्र !

पावन 'पर्वत' के क्षितिज से तुझ पर प्रकाश चमका है और ज्ञान की चेतना ने तेरे हृदयरूपी सिनाई में श्वांस फूँक दी है। इसलिये, व्यर्थ कल्पनाओं के आवरणों से स्वयं को मुक्त कर ले और मेरे प्रांगण में प्रवेश कर, ताकि तू शाश्वत जीवन के लिए उपयुक्त और मुझसे मिलन के योग्य बन सके। इस प्रकार न तो मृत्यु, न थकान और न ही विपत्ति तुझ तक आयेगी।

{63}

हे मनुष्य के पुत्र !

मेरी शाश्वतता मेरी रचना है, मैंने इसे तेरे लिये रचा है। इसे तू अपनी काया का परिधान बना। मेरी एकता मेरा हस्तकौशल है; तेरे लिये ही मैंने इसे बनाया है, तू इससे स्वयं को ढ़क ले, ताकि तू अनन्त काल तक मेरी अविनाशी सत्ता का प्राकट्य बना रहे।

{64}

हे मनुष्य के पुत्र !

मेरा ऐश्वर्य तेरे लिए मेरा उपहार है, और मेरी भव्यता तेरे प्रति मेरी करूणा का प्रतीक है। जो कुछ मुझे योग्य लगता है उसे कोई नहीं समझ सकेगा और न कोई उसका वर्णन कर सकता है। वस्तुतः अपने सेवकों के प्रति अपनी प्रेममयी-दया तथा अपने जनों के प्रति अपनी प्रेममयी-करुणा के चिह्नस्वरूप इसे मैंने अपने गुप्त भंडार-गृहों तथा अपनी आज्ञाओं के कोषों में संरक्षित रख छोड़ा है।

{65}

हे दिव्य और अदृश्य सार की संतानों !

मुझसे प्रेम करने से तुम्हें रोका जाएगा और जब आत्माएँ मेरा स्मरण करेंगी तब व्याकुल हो उठेंगी, क्योंकि मानव-मन मुझे समझ नहीं सकता और न ही मन मुझे समझ नहीं सकते और हृदय मुझे अन्तविष्ठ कर सकते है।

{66}

हे सौन्दर्य के पुत्र !

मेरी चेतना की सौगंध और मेरे अनुग्रह की सौगंध ! मेरी करुणा की सौगंध और मेरे सौन्दर्य की सौगंध ! शक्ति की जिह्वा से जो कुछ मैंने तेरे समक्ष प्रकट किया है और सामथ्र्य की लेखनी से जो कुछ मैंने तेरे लिये लिपिबद्ध किया है वह सब तेरी समझ और मेरी क्षमता के अनुसार है, मेरी प्रतिष्ठा और स्वर-माधुर्य के अनुरूप नहीं।

{67}

हे मनुष्य की संतानो !

क्या तुम यह नहीं जानते कि हमने तुम सबको एक ही मिट्टी से क्यों उत्पन्न किया ? ताकि कोई भी स्वयं को दूसरे से श्रेष्ठ न समझे। सदैव अपने हृदय में विचार करो कि तेरी उत्पत्ति कैसे हुई थी। चूंकि हमने एक ही तत्व से तुम्हारी उत्पति की है, तुम्हारा यह कर्तव्य है कि तुम एक आत्मा के समान रहो, समान पग से चलो, समान मुख से भोजन ग्रहण करो और समान धरा पर निवास करो, ताकि तुम्हारे अन्तर्तम सत्वों, तुम्हारे कार्य और व्यवहार से एकता के चिन्ह और अनासक्ति का सार प्रकट हो सके। ऐसा तुम्हारे लिए मेरा परामर्श है, हे प्रकाश के समूह ! इस परामर्श पर ध्यान दो ताकि अद्भुत महिमा के वृक्ष से पावनता के फल प्राप्त कर सको।

{68}

हे तुम चेतना के पुत्रों !

तुम मेरे कोषालय हो, क्योंकि तुझमें मैंने अपने रहस्यों तथा अपने ज्ञान के रत्नों को संचित कर रखा है। मेरे सेवकों के बीच जो अजनबी हैं तथा मेरे जनों के मध्य दुर्जन हैं उनसे इनकी रक्षा कर।

{69}

हे उसकी संतान जो अपने स्वः के साम्राज्य में, अपने स्वयं के अस्तित्व से कायम है !

तू जान ले, कि पावनता की संपूर्ण सुरभि को मैंने तुझ तक प्रवाहित कर दिया है मैंने अपने शब्द तुझ पर अपनी अनुकम्पा के द्वारा पूर्ण कर दिये हैं तेरे माध्यम से अपनी उदारता को परिपूर्ण कर दिया है और तेरे लिए उसकी इच्छा की है जिसकी इच्छा मैंने अपने स्वयं के लिए की है। मेरी इच्छा से संतुष्ट रह और मेरे प्रति कृतज्ञ बन।

{70}

हे मनुष्य के पुत्र !

प्रकाश की स्याही से अपनी चेतना की पाती पर वह सब लिख ले जो हमने तुझ पर प्रकट किया है। अगर यह तेरी सामथ्र्य में न हो, तो अपने हृदय के सार को अपनी स्याही बना ले अगर तू ऐसा भी न कर सके तो उस रक्ताभ स्याही से अंकित कर जो मेरी राह में बहायी गई है। वास्तव में यह मुझे अन्य सभी से प्रिय है ताकि इसका प्रकाश सदैव बना रहे।

{71}

द्वितीय खण्ड

फारसी से

वाणी के स्वामी
शक्तिशाली के नाम से !

हे तुम लोग जिनके जानने वाले मन और सुनने वाले कान हैं !

परमप्रिय का प्रथम आह्वान यह हैः हे रहस्यमयी बुलबुल! चेतना की गुलाब-वाटिका के सिवाय कहीं निवास न कर। हे प्रेम के सुलेमान के दूत! सर्वप्रिय की 'शेबा' के अतिरिक्त तू किसी अन्य आश्रय की खोज न कर, और हे अमर पखेरू ! विश्वासपात्रता के पर्वत के अतिरिक्त कहीं निवास न कर, यहीं है तेरा निवासस्थान। यदि तू अपनी आत्मा के पंखों के सहारे असीम लोक तक उड़े और अपने लक्ष्य को प्राप्त करने की खोज करे।

{1}

हे चेतना के पुत्र !

पक्षी अपने घोंसले की खोज करता है; और बुलबुल गुलाब की मोहकता की; जबकि मानव के हृदय, अस्थायी धूल से ही संतुष्ट हो, अपने शाश्वत घोंसले से बहुत दूर भटक चुके हैं, और असावधानी के दलदल की ओर आंखें लगाये दिव्य उपस्थिति के गौरव से वंचित हैं। हाय! कितना विलक्षण और दयनीय है; एक प्याली मात्र के लिए, उन्होंने अपने उच्चतम के उमड़ते सागर से अपना मुंह फेर लिया है, और अत्यंत देदीप्यमान क्षितिज से दूर बने रहे हैं।

{2}

हे मित्र !

अपनी हृदय-वाटिका में प्रेम के गुलाब के सिवा अन्य कुछ भी न उपजा, और स्नेह तथा इच्छा के बुलबुल के प्रति अपनी निष्ठा को धारण करने से न चूक। न्याय परायण जनों की संगत को बहुमूल्य समझ और दुर्जन के साथ का पूर्ण त्याग कर।

{3}

हे न्याय के पुत्र !

अपने प्रियतम की नगरी के सिवा कोई प्रेमी और कहाँ जा सकता है? और अपनी हृदयाकांक्षा से दूर किस जिज्ञासु को विश्रांति मिल सकती है ? सच्चे प्रेमी के लिए पुनर्मिलन जीवन, और वियोग मृत्यु है। उसका वक्ष अधीर और उसके हृदय में शांति नहीं होती। अपने प्रियतम के निवास तक पहुंचने की शीघ्रता में वह असंख्य जीवन का भी उत्सर्ग कर देगा।

{4}

हे धूल के पुत्र !

सत्यतः मैं तुझसे कहता हूँ: समस्त मानवों में सर्वाधिक लापरवाह वह व्यक्ति है जो व्यर्थ ही विवाद करता रहता है और अपने बंधु से स्वयं को आगे रखने का यत्न करता है। कहो: हे बंधुओं! शब्दों को नहीं, अपितु कर्मों को अपने आभूषण बना।

{5}

हे धरती के पुत्र !

सत्य ही, जानो, कि ऐसा हृदय जिसमें लेशमात्र भी ईर्ष्या के अवशेष अभी शेष हैं, वह मेरे अनन्त साम्राज्य में प्रवेश नहीं कर सकेगा, न ही मेरे पवित्रता के लोक से आती पावनता की मधुर सुगंध की निश्वांस ले पायेगा।

{6}

हे प्रेम के पुत्र !

महिमामय ऊँचाइयों से और प्रेम के दिव्य तरुवर से तू मात्र एक पग दूर है। तू एक पग बढ़ा और अगले पग के साथ ही तू अमर साम्राज्य में प्रवेश पा और शाश्वतता के मण्डप में प्रविष्ट हो जा। महिमा की लेखनी द्वारा जो प्रकट किया गया है उस पर ध्यान दे।

{7}

हे महिमा के पुत्र !

पावनता की राह में शीघ्रगामी हो, और मेरे साथ निकटता के आकाश में प्रवेश पा। चेतना की चमक से अपने हृदय को स्वच्छ कर ले और सर्वोच्च के प्रांगण की शीघ्रता कर।

{8}

हे क्षणभंगुर छाया !

शंका की अधमतर अवस्थाओं को पार कर जा और निश्चय की उदात्त ऊँचाइयों तक उठ। सत्य के नेत्र खोल, ताकि तू अनावृत सौन्दर्य का साक्षात्कार करे और पुकार उठे: पावन है स्वामी, समस्त रचनाकारों में सर्वोत्तम!

{9}

हे लालसा के पुत्र !

इस पर ध्यान दे : नश्वर नेत्र कभी भी अनन्त सौन्दर्य को पहचान न पायेंगे, न ही निर्जीव हृदय मुरझाये फूल के अतिरिक्त किसी में किंचितमात्र आनंदित होगा। क्योंकि जो जैसा होता है वैसे को ही ढूंढता है, और अपनी तरह की संगत में ही आनन्द पाता है।

{10}

हे धूल के पुत्र !

अपने नेत्र मूंद ले, जिससे तू मेरे सौन्दर्य को निहार सके; अपने कानों को बंद कर ले, ताकि तू मेरे वाणी के स्वर माधुर्य को सुन सके; समस्त ज्ञान से स्वयं को रिक्त कर ले, ताकि तू मेरे ज्ञान का भागी बन सके; और समृद्धि से स्वयं को पवित्र कर ले, ताकि मेरी शाश्वत सम्पदा के सागर से तू अपना चिरस्थायी भाग ग्रहण कर सके। अपने नेत्र मूंद ले, अर्थात् मेरे सौन्दर्य के अतिरिक्त अन्य सभी से, मेरे शब्द के अतिरिक्त अन्य कुछ भी न सुन, मेरे ज्ञान के अतिरिक्त अन्य समस्त ज्ञान से स्वयं को रिक्त कर ले, ताकि तू एक स्पष्ट दृष्टि, एक शुद्ध हृदय और एक सचेत कर्ण के साथ मेरे पावनता के प्रांगण में प्रवेश पा सके।

{11}

हे दो दृष्टि के मनुष्य !

एक नेत्र को मूंद ले और दूसरे को खोल ले। एक को संसार और उसमें विद्यमान सभी कुछ से मूंद ले और दूसरे को प्रियतम के पावन सौन्दर्य के लिए खोल ले।

{12}

हे मेरी संतान !

मुझे भय है, कि दिव्य कपोत के स्वर माधुर्य से वंचित होकर, तुम कहीं पूर्ण विनाश की छाया में न खो जाओ, और, गुलाब के सौन्दर्य को अपलक निहारे बिना ही, जल और मिट्टी में वापस न लौट जाओ।

{13}

हे मित्रो !

नाशवान सौन्दर्य के लिए अनंत सौन्दर्य का त्याग न करो, और धूल के इस नाशवान संसार से अनुराग न रखो।

{14}

हे चेतना के पुत्र !

समय आयेगा, जब पावनता की बुलबुल अन्तर्तम रहस्यों को और अधिक प्रकट नहीं करेगी और तुम सभी दिव्य स्वर-माधुर्य और उच्च लोक की वाणी से वंचित रह जाओगे।

{15}

हे असावधानी के सार !

असंख्य रहस्यमयी जिह्वाओं की अभिव्यक्ति एक ही बात में हो जाती है और असंख्य गुप्त रहस्य एक ही राग में प्रकट हो जाते हैं; फिर भी खेद है कि न सुनने के लिए कान, न समझने के लिए हृदय है।

{16}

हे सहयोगियो !

'स्थानरहित' मंच के द्वार पूरी तरह खुले हुये हैं और प्रियतम का निवास स्थान प्रेमियों के लहू से सुशोभित हो रहा है, फिर भी, कुछ को छोड़कर, सभी इस दिव्य नगर से वंचित रह गए हैं और इन कुछ लोगों में से भी, मात्र मुठ्ठी भर जन ही शुद्ध हृदय और पवित्र चेतना वाले पाये गये हैं।

{17}

हे तुम उच्चतम स्वर्ग में रहने वालो!

आश्वासन की संतानों के समक्ष घोषणा कर दो कि पवित्रता के साम्राज्य के भीतर दिव्य स्वर्ग के निकट, एक नवीन उद्यान प्रकट हुआ है जिसकी परिक्रमा उच्च लोक के वासी तथा उन्नत स्वर्ग के अमरवासी कर रहे हैं। प्रयत्न करो, कि तुम उस पद को प्राप्त कर सको जिससे तुम इसके विभिन्न रंगों वाले पुष्पों से प्रेम के रहस्यों को सुलझा सको और दिव्य तथा पूर्ण विवेक के रहस्य को इसके शाश्वत फलों से जान सको। उनके नेत्र तृप्त हो जाते हैं जो इसमें प्रवेश करते और इसमें निवास करते हैं!

{18}

हे मेरे मित्रो !

उस यथार्थ एवं दीप्तिमान प्रभात को, क्या तुमने भुला दिया है, जब उस पावन तथा श्रद्धापूर्ण वातावरण में उस जीवन वृक्ष की छांव तले जो सर्वमहिमामय स्वर्ग में रोपित किया गया है? तुमने भावविह्वल होकर सुना था जब मैंने इन तीन पवित्रतम शब्दों का उच्चारण किया था: हे मित्रो! मेरी इच्छा पर अपनी इच्छा को प्राथमिकता न दो, उसकी इच्छा न करो जिसकी इच्छा मैंने तुम्हारे लिए नहीं की है, सांसारिक इच्छाओं और लालसाओं से दूषित निर्जीव हृदय लेकर मेरे निकट न आओ। यदि तुम अपनी आत्माओं को पवित्र कर लेते, तो तुम्हें इसी क्षण उस स्थल तथा परिवेश का स्मरण हो जाता, और मेरी वाणी का सत्य तुम सभी पर स्पष्ट हो जाता।

{19}

स्वर्ग की पाँचवीं पाती की, परम पावन पंक्तियों की आठवीं पंक्ति में वह कहता हैं :

हे तुम असावधानी की शय्या पर मृतप्राय पड़े हुये लोगो !

युग बीत गये हैं और तुम्हारे मूल्यवान जीवन लगभग समाप्त हो गये हैं, फिर भी तुम्हारी ओर से हमारे पवित्र प्रांगण तक पवित्रता की एक भी श्वांस नहीं पहुँची है। यद्यपि तुम अविश्वास के महासागर में डूबे हुये हो, फिर भी तुम अपने मुख से ईश्वर के सच्चे धर्म का दावा करते हो। जिससे मैं घृणा करता हूँ, तुम उससे प्रेम करते हो और मेरे शत्रु को तुमने अपना मित्र बना लिया है। इतना कुछ होते हुये भी, तुम मेरी धरा पर स्वः-संतुष्ट और निश्चिंत हो घूम रहे हो और इससे अचेत हो कि मेरी धरती तुमसे ऊब चुकी है और इसकी हर चीज तुमसे किनारा कर रही है। यदि तुमने अपनी आँखें खोली होतीं, तो निश्चय ही इस प्रसन्नता के बदले कोटि-कोटि दुःखों का वरण करते और मृत्यु को इस जीवन से बेहतर मानते।

{20}

हे धूल के गतिमान स्वरूप !

मैं तुझसे घनिष्टता की इच्छा रखता हूँ, परन्तु तुझे मुझ पर भरोसा कहाँ है। तेरे विद्रोह की तलवार ने तेरी आशा के वृक्ष को धराशायी कर दिया है। सदैव ही मैं तेरे निकट रहा हूँ, परन्तु तू सदैव मुझसे दूर रहा है। मैंने तेरे लिए अविनाशी महिमा का चयन किया है, फिर भी तूने अपने लिये अंतहीन लज्जा को चुना है। अभी भी समय है, लौट आ, और अपने अवसर को न गंवा।

{21}

हे लालसा के पुत्र !

प्रबुद्धजनों एवं बुद्धिमानों ने अनेक वर्षों तक प्रयत्न किया फिर भी वे सर्व-महिमावान की उपस्थिति को प्राप्त कर पाने में असफल रहे; उन्होंने उसकी खोज में अपने जीवन लगा दिये, तथापि उसके मुखमण्डल के सौन्दर्य को निहारने में वे असफल रहे। तूने तनिक भी प्रयास किये बिना ही अपने ध्येय को पा लिया, और बिना तलाश के अपनी खोज का लक्ष्य प्राप्त कर लिया। फिर भी, इतना होते हुए भी, तू स्वः के आवरण में इस तरह लिपटा रहा, कि न तो तेरे नेत्र प्रियतम के सौन्दर्य को निहार सके, न ही तेरा हाथ उसके परिधान के छोर को ही स्पर्श कर पाया। तुम जिनके पास नेत्र हैं, देखो और विस्मय करो।

{22}

हे प्रेम नगर के वासियो !

पार्थिव झोकों ने अनंत दीप को आवृत कर रखा है और दिव्य युवा का सौन्दर्य, धूल के अंधकार में छुप गया है। प्रेम के सम्राटों के सर्वोच्च को अत्याचारी जनों द्वारा यातना पहुंचाई गई है और पवित्रता का कपोत उलूकों के पंजों में बंदी बना हुआ है। महिमा के मण्डप के निवासी और दिव्य समूह रुदन और विलाप कर रहे हैं जबकि तुम उपेक्षा के लोक में विश्राम कर रहे हो, और तुम स्वयं को सच्चे मित्रों में मानते हो। कितनी व्यर्थ हैं तुम्हारी कल्पनायें!

{23}

हे तुम जो मूर्ख हो, फिर भी बुद्धिमान का नाम धारण किये हो!

तुम क्यों गड़रियों का वेश धारण किये हुए हो, जबकि भीतर से तुम भेड़िये बन चुके हो, मेरे जनसमूह पर घात लगाये हो ? तुम उस तारे की भांति हो, जो प्रभात के पूर्व निकलता है, और जो, यद्यपि चमकता और जगमगाता हुआ प्रतीत होता है, मेरे नगर के पथिकों को विनाश की राहों पर भटका देता है।

{24}

हे तुम भले दिखने वाले फिर भी अंदर से कपटपूर्ण!

तुम स्वच्छ परन्तु कड़ुवे जल के समान हो, जो वाह्य रूप से शुद्ध चमकता प्रतीत होता है परन्तु जब दिव्य पारखी के द्वारा इसको परखा जाता है, तब इसकी एक बूंद भी स्वीकार्य

नहीं होती। यद्यपि सूर्य-रश्मि धूल और दर्पण में समान रूप से पड़ती है फिर भी प्रतिबिम्बिन में वे भिन्न हैं, ठीक उसी प्रकार जैसे तारा पृथ्वी से: बल्कि, अंतर अपरिमेय है।

{25}

हे मेरे शाब्दिक मित्र !

तनिक विचार कर। क्या तूने कभी सुना है कि मित्र और शत्रु एक ही हृदय में रहें ? निकाल फेंक उस अजनबी को, ताकि मित्र अपने गृह में प्रवेश कर सके।

{26}

हे धूल के पुत्र !

धरती और आकाश में जो भी है वह मैंने तेरे लिये निर्धारित किया है, सिवाय मानव-हृदय के, जिसे मैंने अपने सौन्दर्य और महिमा का निवास स्थान बनाया है; फिर भी तूने मेरे आवास और निवास को मेरे अतिरिक्त किसी अन्य को दे दिया है; और जब कभी मेरी पावनता के प्रकटीकरण ने अपने भवन की खोज की, तब उसने वहाँ किसी अपरिचित को पाया और गृहविहीन वह शीघ्रता से प्रियतम के शरणस्थल की ओर लौट आया; फिर भी, मैंने तेरे भेद को छिपाए रखा और तुझे लज्जित करने की इच्छा नहीं की।

{27}

हे लालसा के सार !

अनेक प्रभातों में स्थानरहित साम्राज्यों से मैं तेरे निवास स्थान तक आया, और मैंने तुझे अपनी शय्या पर निश्चिंततापूर्वक मेरे अतिरिक्त किसी अन्य के साथ व्यस्त पाया। तत्पश्चात, चेतना की कौंध की भांति, मैं दिव्य महिमा के साम्राज्यों में लौट गया और अपने एकांतवास में पावनता के समूहों के समक्ष इसकी चर्चा नहीं की।

{28}

हे उदारता-पुत्र !

अनस्तित्व के अपशिष्ट से, अपनी आज्ञा की माटी से मैंने तुझे प्रकट किया प्रत्येक अस्तित्वान परमाणु तथा सृजित वस्तुओं के सार तेरे प्रशिक्षण हेतु नियुक्त किए। इस प्रकार, इसके पूर्व की तू अपनी माता की कोख से जन्म ले, मैंने तेरे लिए चमकते हुये दूध के दो स्रोत

नियत कर दिये, तेरी देखभाल के लिए आँखें दीं और तुझे प्रेम करने वाले हृदय दिये, अपनी प्रेममयी कृपालुता के कारण ही अपनी करुणा की छांव तले मैंने तेरा पालन-पोषण किया और अपनी कृपा और अनुकम्पा के सार के सहारे तेरी देखभाल की। और इन सब में मेरा उद्देश्य था कि तू मेरे अनन्त साम्राज्य और अदृश्य उपहारों को पाने योग्य बन सके। फिर भी, तू असावधान रहा और जब पूर्णतया विकसित हुआ, तब मेरी समस्त उदारताओं की अवहेलना की और स्वयं को अपनी ही व्यर्थ कल्पनाओं में व्यस्त रखा, इस प्रकार कि तू पूर्णतया भूल गया, और, मित्र के द्वार से मुँह मोड़ कर मेरे शत्रु के प्रांगण में रहने लगा।

{29}

हे संसार के बंधुआ दास !

अनेक प्रभातों में मेरी प्रेममयी-कृपालुता की बयार तेरे ऊपर से होकर बही और तुझे बेपरवाही की शय्या पर प्रगाढ़ निद्रा में निमग्न पाया। तब तेरी दुर्दशा पर विलाप करती हुई वह जहाँ से आई थी वहीं लौट गई।

{30}

हे धरती के पुत्र !

तू यदि मुझे चाहे, तो मेरे अतिरिक्त किसी अन्य की खोज न कर; और यदि तू मेरे सौन्दर्य को अपलक देखना चाहे तो अपने नेत्रों को संसार तथा उसमें जो कुछ भी है उससे मूंद ले, क्योंकि मेरी इच्छा और मेरे अतिरिक्त किसी अन्य की इच्छा, अग्नि और जल के समान है, एक ही हृदय में एक साथ नहीं रह सकते।

{31}

हे मित्रवत अपरिचित !

तेरे हृदय के दीप को मेरी शक्ति के हस्त ने प्रदीप्त किया है, अहं एवं वासना के विरोधी झोकों से उसे न बुझा। तेरे समस्त रोगों का उपचार मेरा स्मरण है, इसे न भूल। मेरे प्रेम को अपना खज़ाना बना और इसे स्वयं अपनी दृष्टि और अपने जीवन के समान ही संजो कर रख।

{32}

हे मेरे भ्रात !

मेरी मधुपूर्ण जिह्वा से निकले आनंदप्रद शब्दों को सुन, और मिठास झरते मेरे अधरों से, रहस्यमयी पावनता के प्रवाह का पान कर। अपने अन्तःकरण की विशुद्ध धरती पर दिव्य

विवेक का बीजारोपण कर और उन्हें आस्था के जल से सींच, ताकि मेरे ज्ञान तथा विवेक के ताजा और हरे-भरे पुष्प तेरे हृदय की पावन नगरी में प्रकट हों।

{33}

हे मेरे स्वर्ग के निवासियो !

प्रेममयी-दयालुता के हस्त से मैंने स्वर्ग के पवित्र उद्यान में तुम्हारे प्रेम और मित्रता के नन्हे वृक्ष को रोपा है, और अपनी सुकोमल कृपा की सुंदर फुहारों से उसका सिंचन किया है, अब जब उसके फल देने का समय आ गया है, यत्न करो कि इसकी रक्षा हो सके, और वासना और इच्छा की ज्वाला से यह समाप्त न हो जाए।

{34}

हे मेरे मित्रो !

भ्रांति के दीप को बुझा दो, और अपने हृदय में दिव्य मार्गदर्शन की चिरस्थायी मशाल को प्रज्वलित कर लो। क्योंकि अति शीघ्र मानवजाति के पारखी, इष्ट की पावन उपस्थिति में, अन्य कुछ नहीं, मात्र विशुद्धतम गुणों तथा निष्कलुश पावन कर्मों को ही स्वीकार करेंगे।

{35}

हे धूल के पुत्र !

बुद्धिमान वे हैं जो जब तक श्रोता नहीं पाते नहीं बोलते, ठीक वैसे ही जिस प्रकार साकी, जब तक आकांक्षी नहीं देखता, अपना प्याला अर्पित नहीं करता और प्रेमी जब तक अपनी प्रियतमा के सौन्दर्य को अपलक निहार नहीं लेता तब तक अपने हृदय के गहराई से गुहार नहीं लगाता। इसलिए हृदय की विशुद्ध भूमि में ज्ञान और विवेक के बीज बोकर उन्हें उस समय तक गुप्त रख, जब तक कीचड़ और मिट्टी से नहीं बल्कि हृदय की पवित्र भूमि से दिव्य ज्ञान के पुष्प न खिल उठें।

{36}

पाती की प्रथम पंक्ति में यह अंकित तथा उल्लिखित किया गया है, और ईश्वर के मण्डप के पवित्र गर्भगृह में इसे गुप्त रखा गया है : हे मेरे सेवक ! जो नाशवान है उसके लिए अनन्त साम्राज्य का परित्याग न कर, और सांसारिक इच्छा के लिए दिव्य साम्राज्य को न गंवा। यह अनन्त जीवन की वह सरिता है जो दयावंत की लेखनी के निर्झरस्रोत से प्रवाहमान हुई है; धन्य हैं वे जो इसका पान करते हैं!

{37}

हे चेतना के पुत्र !

अपने पिंजड़े को तोडकर छिन्न-भिन्न कर दे, और प्रेम के ‘हुमा’ पक्षी की भांति पवित्रता के व्योम की ओर उड़ान भर। स्वयं का त्याग कर दे और, दया के भाव से परिपूर्ण, दिव्य पावनता के साम्राज्य में निवास कर।

{38}

हे धूल की संतान !

चलायमान दिवस के सुख में संतुष्ट न रह, और स्वयं को अनन्त विश्रांति से वंचित न कर। शाश्वत आनंद की वाटिका का एक नाशवान संसार की धूल के ढेर के लिए सौदा न कर। अपने कारागार से परे शोभायमान हरित मैंदानों की ओर आरोहण कर, और नाश्वान पिंजड़े से स्थानरहित स्वर्ग की ओर उड़ान भर।

{39}

हे मेरे सेवक !

इस संसार के बंधनों से स्वयं को मुक्त कर, और अहं के कारागार से अपनी आत्मा को मुक्त कर ले। अवसर को न गवां, क्योंकि यह तुझे फिर नहीं मिलेगा।

{40}

हे मेरी सेविका के पुत्र !

यदि तू अमर साम्राज्य के दर्शन कर ले तो तू इस क्षणभंगुर संसार से जाने के प्रयास करेगा। किन्तु, तुझसे एक को गुप्त रखने और दूसरे को तेरे समक्ष प्रकट करने में एक ऐसा रहस्य निहित है जिसे मात्र शुद्ध हृदयीजन ही समझ सकते हैं।

{41}

हे मेरे सेवक !

दुर्भावना से अपने हृदय को शुद्ध कर ले और, ईर्ष्या से रहित, पवित्रता के दिव्य प्रांगण में प्रवेश कर।

{42}

हे मेरे मित्रों !

तुम परम 'मित्र' की शुभेच्छा के मार्ग पर चलो, और यह जान लो कि 'उसकी' इच्छा अपने प्राणियों की प्रसन्नता में निहित है। अर्थात कोई मनुष्य अपने मित्र की इच्छा के बिना उसके गृह में प्रवेश न करे, उसकी सम्पदा पर हाथ न डाले अपनी इच्छा को अपने मित्र की इच्छा से श्रेष्ठ न समझे और किसी भी दशा में उसका अनुचित लाभ न ले। इस पर मनन करो, हे तुम अन्तर्दृष्टि वाले लोगों !

{43}

हे मेरे सिंहासन के सहचर!

कोई बुराई न सुन, और कोई बुराई न देख, स्वयं पतित न बन, न ही आह् भर न विलाप कर। बुरा न बोल ताकि तुझे बुरा न सुनना पडे, और दूसरे के दोषों को आवर्द्धित न कर, ताकि तेरे दोष भी बढ़े न दिखें; किसी के अनादर की कामना न कर, ताकि तेरे स्वयं का अनादर अनावृत न हो जाये। तब अपने जीवन के दिनों को जो एक चलायमान क्षण से भी कम हैं, निष्कलंक मन, निर्मल हृदय, शुद्ध विचार सहित जी, ताकि स्वतंत्र और संतुष्ट इस नाश्वान ढांचे को, इसके योग्य स्थान पर पहुंचा दे, और रहस्मय स्वर्ग की ओर प्रस्थान कर और शाश्वत साम्राज्य में सदैव के लिए बना रहे।

{44}

अफसोस ! अफसोस !

हे सांसारिक इच्छा के प्रेमियो बिजली की सी तीव्रता से तुम उस ''परमप्रिय'' के निकट से गुजर गये हो, और अपने हृदयों को शैतानी विचारों में लिप्त कर लिया है, अपनी व्यर्थ कल्पनाओं के सामने तुम घुटने टेक देते हो और इसे सत्य कहते हो। तुम अपनी दृष्टि कंटक की ओर करते हो और इसको फूल का नाम देते हो। तुमने एक भी शुद्ध श्वांस नहीं ली है और न ही तुम्हारे हृदयों की हरित भूमि से अनासक्ति का समीर प्रवाहित हुआ है। तुमने प्रियतम के प्रेममय परामर्श को हवा में उड़ा दिया है और अपने हृदय की पाती से पूर्णतया मिटा दिया है। क्षेत्र के हिंसक पशुओं की भांति तुम चलते-फिरते और लालसा एवं वासना की चरागाहों में अपना जीवनयापन करते हों।

{45}

हे मार्ग के बंधुओं !

परमप्रिय के उद्घोष को तुमने क्यों उपेक्षित कर दिया है, और उसकी पावन उपस्थिति से क्यों दूर कर लिया है ? सौन्दर्य का सार उस अद्वितीय मण्डप में है, जो महिमा के सिंहासन पर स्थापित है, जबकि तुमने स्वयं को व्यर्थ विवादों में व्यस्त कर रखा है। पावनता की मधुर सुरभि प्रवाहित हो रही है और उदारता की बयार बह रही है, फिर भी तुम इनसे वंचित हो पूरी तरह कष्ट में डूबे हुए हो। अफसोस है तुम्हारे लिए और उनके लिए जो तुम्हारे मार्ग पर चलते हैं और तुम्हारे पगचिन्हों का अनुसरण करते हैं।

{46}

हे कामना की संतान !

व्यर्थाभिमान के परिधान को उतार फेंकों, और स्वयं को अंहकार के परिधान से विवस्त्र कर लो।

{47}

उस अदृश्य की लेखनी द्वारा माणिकपत्र पर अंकित तथा अभिलिखित परम पावन पंक्तियों में तीसरी पंक्ति में यह रहस्योद्घाटन किया गया है : हे भ्रात ! एक-दूसरे के प्रति सहनशील बन और हीन वस्तुओं पर अपना अनुराग न रख। अपनी प्रतिष्ठा पर घमण्ड न कर और न अनादर से लज्जित हो। मेरे सौन्दर्य की सौगंध ! समस्त वस्तुओं को मैंने धूल से उत्पन्न किया है, और धूल में ही उन्हें मैं पुनः लौटा दूंगा।

{48}

हे धूल की संतान !

धनिकों को निर्धन की अर्द्धरात्रि की आहों को बता, कहीं असावधानी उन्हें विनाश के मार्ग पर न ले जाए और उन्हें 'समृद्धि के वृक्ष' से वंचित न कर दे। देना तथा उदारता मेरे गुण हैं; वह धन्य होगा जो स्वयं को मेरे गुणों से सुशोभित करता है।

{49}

हे वासना के सारतत्व !

समस्त लोभ को परे हटा और संतोष की खोज कर; क्योंकि लोभी सदैव वंचित है, और संतोषी सदैव प्रशंसित और प्रिय है।

{50}

हे मेरी सेविका के पुत्र !

दरिद्रता में व्याकुल न हो न ही धन-धान्यता से आश्वस्त हो, क्योंकि दरिद्रता धनधान्यता का अनुगमन करती है और धनधान्यता दरिद्रता का अनुगमन करती है। फिर भी, ईश्वर के अतिरिक्त अन्य वस्तुओं से मुक्त हो जाना एक अलौकिक उपहार है, इसकी महत्ता को कम न कर, क्योंकि अंत में यही तुझे उस ईश्वर में धनवान बनाएगी, और इस प्रकार तू इस वचन के सत्य को जान सकेगा कि ”सत्य ही तुम दरिद्र हो“ और ये पावन शब्द ”ईश्वर ही सर्व-सम्पन्न है“ सत्य की भोर की कांति के समान प्रेमी के हृदय के क्षितिज पर उद्भासित हो जायेंगे, और इस प्रकार तू समृद्धि के सिंहासन पर विद्यमान रहेगा।

{51}

हे असावधानी और वासना की सन्तान !

मेरे शत्रु को तूने मेरे घर में प्रवेश दिया है और मेरे मित्र को तूने निकाल दिया है, क्योंकि तूने अपने हृदय में मेरे अतिरिक्त किसी अन्य के प्रेम को प्रतिष्ठापित किया है। मित्र के कथनों पर ध्यान दे और उसके स्वर्ग की ओर उन्मुख हो। सांसारिक मित्र, अपने भले की कामना करते, एक-दूसरे से प्रेम करते दिखाई देते हैं, जबकि सच्चा ‘मित्र’ तुमसे तुम्हारे लिए प्रेम करता है और सदा-सर्वदा करता रहेगा, निश्चय ही तेरे मार्गदर्शन हेतु उसने असंख्य यातनायें सहीं हैं। ऐसे मित्र के प्रति विश्वासघाती न बन, न ही उसे अस्वीकार कर। यह विश्वासपात्रता और सत्य का दिवानक्षत्र है जो समस्त नामों के स्वामी की लेखनी के क्षितिज पर उदित हुआ है। अपने कानों को खोल लो जिससे तुम संकटों में सहायक, स्वः-विद्यमान ईश्वर की शब्दों को सुन सको।

{52}

हे तुम अपनी नाश्वान सम्पदा पर अभिमान करने वालों !

तुम सत्य ही जानो कि धन-धान्यता उसकी खोज और इच्छा और उसके परमप्रिय के मध्य प्रबल बाधा है। धनवान, परंतु उनमें से कुछ ही, न तो उस परमप्रिय के प्रांगण में किसी भी तरह पहुँच सकेंगे और न ही संतोष और त्याग के नगर में प्रवेश पा सकेंगे। उनके बीच

उनका कल्याण होगा, जो धनवान होते हुए भी, अपनी धन-धान्यता को न तो शाश्वत लोक की प्राप्ति में बाधक बनने देते हैं, और न ही उसके कारण शाश्वत साम्राज्य से वंचित रहते हैं। सर्वमहान नाम की सौगंध ! ऐसे धनवान मनुष्य का तेज स्वर्गलोक वासियो को इस प्रकार प्रकाशमय करता है जिस प्रकार सूर्य धरती के लोगों को प्रकाशमय करता है !

{53}

हे तुम धरती के धनवानों ! तुम्हारे मध्य निर्धन मेरी अमानत हैं, मेरी अमानत की तू रक्षा कर और केवल अपने ही सुख-चैन में लिप्त न रह।

{54}

हे वासना के पुत्र !

धनधान्यता की अशुद्धताओं से स्वयं को निर्मल कर और पूर्ण शांति से दरिद्रता के साम्राज्य की ओर अग्रसर हो ताकि अनासक्ति के स्रोत से तू शाश्वत जीवन की मदिरा का पान कर सके।

{55}

हे मेरे पुत्र !

दुर्जन की संगत शोक को बढ़ाती है, जबकि सदाचारियों की संगत हृदय को विकार से निर्मल कर देती है। वह जो ईश्वर से संसर्ग रखने की इच्छा करता है, उसे चाहिए कि वह ईश्वर के प्रियजनों से संसर्ग रखे; और वह जो ईश्वर के शब्द पर ध्यान देना चाहता है, उसे चाहिए कि 'उसके' चुने हुए जनों के शब्दों पर ध्यान दे।

{56}

हे धूल के पुत्र !

सावधान ! दुर्जन के साथ न चल और उसके साथ मित्रता की चाह न कर क्योंकि ऐसी संगति हृदय के प्रकाश को नरकाग्नि में परिवर्तित कर देती है।

{57}

हे मेरी सेविका के पुत्र !

यदि तू पवित्र चेतना की कृपा चाहता है, सदाचारियों की संगति को प्राप्त कर, क्योंकि उन्होंने दिव्य साकी के हाथों शाश्वत जीवन का प्याला पी लिया है और वास्तविक प्रभात के समान, वह निश्चय ही मृतकों के हृदयों को गतिमान एवं प्रकाशित कर देते हैं।

{58}

हे असावधानों !

यह न सोच कि तुम्हारे हृदय के रहस्य गुप्त हैं, नहीं, तू यह जान कि सुनिश्चित रूप से वे स्पष्ट रूप से उत्कीर्ण और पावन उपस्थिति में पूर्ण रूप से प्रकट हैं।

{59}

हे मित्रों !

सत्य ही मैं कहता हूँ, जो कुछ भी तूने अपने हृदय में छिपा रखा है, वह दिन के समान हमारे समक्ष प्रकट है, किन्तु यदि वह गुप्त है तो हमारी महानता और अनुकम्पा के कारण, न कि तुम्हारी पात्रता के कारण।

{60}

हे मनुष्य के पुत्र !

अपनी दया के अथाह महासागर से ओस की एक बूंद मैंने संसार के जनों पर गिरा दी है, फिर भी उसकी ओर उन्मुख होता हुआ मुझे एक भी न मिला, बल्कि, एकता की दिव्य सुरा से विमुख होकर अपवित्रता के मलीन तलछटों में लिप्त हैं, और, पार्थिव प्याले से संतुष्ट होकर, अनश्वर सौन्दर्य के प्याले को तज दिया है। जिससे वह संतुष्ट है, वह अधम है।

{61}

हे धूल के पुत्र !

अमर प्रेमी की अनुपम मदिरा से अपने नेत्रों को न फेर, और उन्हें मलीन तथा नश्वर तलछटों के लिए न खोल। दिव्य साकी के हाथों से अनश्वर जीवन का प्याला ग्रहण कर, ताकि तू समग्र विवेक का पात्र बन सके और अदृश्य साम्राज्य से आह्वान करती रहस्मयी वाणी को सुन सके। पुरजोर आवाज में कह, निम्न उद्देश्य वालो! तुम क्षणिक जल के लिए मेरी पवित्र और अविनाशी मदिरा से क्यों विमुख हो गये हो ?

{62}

हे तुम संसार के लोगो !

वस्तुतः, जानो, कि एक अज्ञात संकट तुम्हारा पीछा कर रहा है, और एक गंभीर प्रतिशोध तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहा है। यह न सोचो कि तुम्हारे कृत्य मेरी दृष्टि से ओझल हो चुके हैं। मेरे सौंदर्य की सौगंध! तुम्हारे सभी कृत्यों को मेरी लेखनी ने अमिट पाती पर स्पष्ट अक्षरों में अंकित कर रखा है।

{63}

हे धरती के अत्याचारियों !

अत्याचार से अपने हाथों को खींच लो, क्योंकि मैंने प्रण लिया है कि मैं किसी भी मनुष्य के अन्याय को क्षमा नहीं करूंगा। यह मेरी संविदा है जिसकी मैंने संरक्षित पाती में अटल आज्ञा दी है और जिस पर मैंने अपनी भव्यता की मुहर अंकित की है।

{64}

हे विद्रोहियों !

मेरी सहनशीलता ने तुम्हें उद्दंड और मेरे दीर्घकालीन कष्टों ने तुम्हें बेपरवाह कर दिया है, इस प्रकार, कि तुमने वासना से उत्तेजित घोड़े को संकटपूर्ण मार्गों पर ऐड लगा दी है जो विनाश की ओर ले जाते हैं। क्या तुम सोचते हो कि मैं असावधान हूँ, या कि मैं अनभिज्ञ था ?

{65}

हे प्रवासियों !

यह जिह्वा मैंने स्वयं के उल्लेख के निमित्त बनाई है, इसे निंदा से दूषित न करो। यदि तुम पर स्वार्थ की अग्नि प्रबल हो, अपने ही दोषों को याद करो, न कि मेरे प्राणियों के दोषों को, क्योंकि तुममें से प्रत्येक एक-दूसरे से अधिक स्वयं के बारे में जानकारी रखता है।

{66}

हे भ्रान्ति की संतान !

सत्य ही, जानो, कि शाश्वत पवित्रता के क्षितिज पर जब देदीप्यमान प्रभात की किरण खिल उठेगी तो शैतानी रहस्य और रात्रि के अंधेरे में किए गए कर्मों को अनावृत कर दिया जायेगा और संसार के जनों के समक्ष सुस्पष्ट प्रकट कर दिया जायेंगा।

{67}

हे धूल से उपजे घास-फूस !

क्योंकर तुमने अपने मैले हाथों से अपने ही परिधान का स्पर्श नहीं किया, और इच्छा तथा विषय-वासना से दूषित हृदय से तुम मुझसे संसर्ग की प्राप्ति और मेरे पवित्र साम्राज्य में प्रवेश पाने की इच्छा क्यों रखते हो? जिसकी तुम इच्छा करते हो उससे तुम दूर, अति दूर हो।

{68}

हे आदम की संतान !

पावन शब्द और शुद्ध तथा अच्छे कर्म दिव्य महिमा के आकाश की ओर आरोहण करते हैं। प्रयत्न करो कि तुम्हारे कर्म, स्वार्थ और पाखंड की धूल से निर्मल होकर, महिमा के प्रांगण में कृपादृष्टि के पात्र बनें, क्योंकि शीघ्र ही मानवजाति के पारखी एक मात्र आराध्य की उपस्थिति में सुनिश्चित गुण और अकलुषित पवित्र कर्मों के अतिरिक्त कुछ भी स्वीकार नहीं करेंगे। यह विवेक और ईश्वरीय रहस्य का वह सूर्य है जो दिव्य इच्छा के क्षितिज पर उद्भासित हुआ है। आशीर्वादित हैं वे जो उसकी ओर उन्मुख होते हैं।

{69}

हे सांसारिकता के पुत्र !

अस्तित्व का जगत अत्यंत मनोहारी है, काश तू उसे प्राप्त कर पाता; शाश्वत साम्राज्य अत्यंत गौरवमय है, यदि तू नाशवान जगत से आगे बढ़ पाता। पवित्रता का हर्षोन्माद सुमधुर है, यदि तू दिव्य ”युवक“ के हाथों से रहस्यमय प्याली पी ले; यदि तू इस पद को प्राप्त कर ले तो विनाश और मृत्यु से तथा कष्टों और पापों से तुझे स्वतंत्रता मिल जाएगी।

{70}

हे मेरे मित्रो !

जमाऩ के पवित्र परिवेश में स्थित ‘पाराण’ पर्वत पर जो संविदा तुमने मेरे साथ स्थापित की थी, उसे याद करो। उच्च जन समूह तथा पारलौकिक नगर के निवासियों को मैंने इसका साक्षी बनाया है, फिर भी मैंने इस संविदा के प्रति किसी को निष्ठावान नहीं पाया। निश्चय ही गर्व और विद्रोह ने हृदयों से इस प्रकार मिटा दिया है कि इसका चिह्न मात्र भी शेष नहीं रहा है। फिर भी यह जानते हुए भी मैंने प्रतीक्षा की और इसे प्रकट नहीं किया।

{71}

हे मेरे सेवक !

तू उत्तम रूप से परिष्कृत तलवार की भाँति है जो अपनी म्यान के अंधकार में छिपी हुई है और इसका मूल्य शिल्पी के ज्ञान से गुप्त है। अतः अहं और इच्छा की म्यान से बाहर आ ताकि तेरी योग्यता समस्त संसार के समक्ष दीप्तिमान और व्यक्त हो सके।

{72}

हे मेरे मित्र !

तू मेरी पावनता के आकाश का दिवानक्षत्र है, संसार की अपवित्रताओं से अपनी भव्यता को ग्रसित न होने दे। लापरवाही के पर्दे को चीर, ताकि बादलों के भीतर से बाहर निकल कर तू जगमगाता हुआ समस्त चीजों को जीवन के परिधानों से अलंकृत कर सके।

{73}

हे महत्वाकांक्षा की संतान !

एक चलायमान साम्राज्य के लिए तुमने मेरे अविनाशी साम्राज्य का त्याग कर दिया है और संसार के भड़कीले परिधानों से स्वयं को सुसज्जित कर लिया है और इसे गर्वोक्ति का साधन बना लिया है। मेरे सौन्दर्य की सौगंध ! मैं धूल के एकरंगी आवरण के नीचे सभी को एकत्र करूंगा और इन सभी विभिन्न रंगों को मिटा दूंगा सिवाय उनके जिन्होंने मेरे अपने रंग का वरण किया है, और वह है प्रत्येक रंग को मिटा देना।

{74}

हे असावधानी की संतान!

नाशवान साम्राज्य के प्रति अनुरक्त न हो और उसमें आनन्द न मना। तुम उस असावधान पक्षी की भांति हो जो पूर्ण विश्वास के साथ डाल पर बैठा गाता रहता है; जिसे अचानक मृत्यु का आखेटक धूल पर फेंक देता है, फिर वह सुरीला राग, आकृति और रंग बिना कोई चिन्ह छोड़े, लुप्त हो जाता है, इस पर ध्यान दो, हे लालसा के बंधुआ दासों!

{75}

हे मेरी सेविका के पुत्र !

मार्गदर्शन सदैव शब्दों के माध्यम से ही दिया जाता रहा है और अब यह कर्मों से दिया जाता है। प्रत्येक को चाहिए कि ऐसे कर्मों का प्रदर्शन करे जो शुद्ध एवं पवित्र हों, क्योंकि शब्द सर्वसामान्य की सम्पदा हैं, जबकि इस प्रकार के कर्म मात्र हमारे प्रियजनों की विशेषता हैं।

अतः स्वयं अपने कर्मों द्वारा विशिष्ट बनने के लिये हृदय और आत्मा से जुट जाओ। इस प्रकार हम इस पवित्र एवं देदीप्यमान पाती में तुम्हें यह परामर्श देते हैं।

{76}

हे न्याय के पुत्र !

रात्रि-बेला में अविनाशी सत्ता का सौन्दर्य निष्ठा की हरित ऊँचाई से सद्रतुल-मुन्तहा की ओर लौट आया, और ऐसे उच्च स्वर में चीत्कार किया कि उच्च जन समूह और उच्चलोक के वासी भी 'उसका' रुदन सुन विलाप करने लगे। इस पर यह पूछा गया, ”यह रुदन और विलाप क्यो ?“ उसने उत्तर दिया : जैसी मुझे आज्ञा दी गई थी, मैं आस्था के पर्वत पर प्रतीक्षा करता रहा, लेकिन पृथ्वीवासियों के बीच निष्ठा की सुरभि नहीं मिली। तब मुझे लौटने का आदेश हुआ और देखो, हाय ! पावनता के कुछ कपोत पृथ्वी के श्वानों के चंगुल से निकलने का प्रयास कर रहे थे उसी समय स्वर्ग की 'सेविका' अपनी सम्पूर्ण तेजोमयता के साथ अपने रहस्यमय प्रासाद से आवरण रहित हो तेजी से निकली और उसने उनके नाम पूछे। और एक के अतिरिक्त सभी नाम बतला दिये गये। और जब याचना की गई तब उसका प्रथम अक्षर बोला गया जिस पर दिव्य लोक के वासी अपनी महिमा के निवास से दौड़ आये और द्वितीय अक्षर को उच्चारित किया गया, तब सब-के-सब धूल पर गिर पड़े। उसी समय अन्तर्तम समाधि के अन्दर से एक आवाज सुनी गई, ”यहीं तक, आगे नहीं।“ सत्य ही हम इसके साक्षी हैं जो उन्होंने किया है और जो वे अब कर रहे हैं।

{77}

हे मेरी सेविका के पुत्र !

उस दयालु की जिह्वा से दिव्य रहस्य की धारा का पान कर, और दिव्य वाणी के उद्गमस्थल से ज्ञान के दिवानक्षत्र के अनावृत तेज का दर्शन कर। हृदय की पवित्र माटी में मेरे दिव्य ज्ञान के बीज बो, और उन्हें आस्था के जल से सींच, ताकि ज्ञान और विवेक के पुष्प हृदय की पवित्र नगरी से ताजे और हरे-भरे होकर खिल उठें।

{78}

हे लालसा के पुत्र !

तू कब तक लालसा के लोकों में उड़ान भरता रहेगा? मैंने तुझे पंख इसलिए प्रदान करे, ताकि तू रहस्मयी़ पवित्रता के लोकों में उड़ सके न कि शैतानी कल्पनाओं के क्षेत्र में उड़ता फिरे। मैंने तुझे कंघी इसलिए दी कि तू मेरी काली लटों को संवारे, इसलिए नहीं कि मेरे कंठ को ही घायल कर दे।

{79}

हे मेरे सेवको !

तुम मेरे उद्यान के वृक्ष हो; तुम्हारे लिए आवश्यक है कि उत्तम और अदभुत फल उत्पन्न करो, ताकि उनसे तुम स्वयं तथा अन्य लाभ पा सकें। इसलिए प्रत्येक के लिए यह आवश्यक है कि शिल्प तथा व्यवसायों में व्यस्त रहें, क्योंकि इसी में धन-धान्यता का रहस्य है, हे समझ वाले लोगों! परिणाम साधनों पर निर्भर करते हैं, और ईश्वर की कृपा तेरे लिए सम्पूर्णतः पर्याप्त है। वृक्ष, जो फल नहीं देते, अग्नि को अर्पित कर देने योग्य होते हैं और रहेंगे।

{80}

हे मेरे सेवक !

निम्नतम श्रेणी के मनुष्य वे हैं जो धरती पर कोई फल नहीं उपजाते। वस्तुतः ऐसे लोग मृतकों में गिने जाते हैं, नहीं, बल्कि, ईश्वर की दृष्टि में उन आलसी और बेकार आत्माओं से मृतक बेहतर हैं।

{81}

हे मेरे सेवक !

मनुष्यों में उत्तम वे हैं जो अपने व्यवसाय द्वारा जीविका अर्जित करते हैं और समस्त लोकों के स्वामी ईश्वर के प्रेम के निमित्त अपने और अपने परिजनों पर व्यय करते हैं।

{82}

वह रहस्यमयी और अद्‌भुत वधू, जो इससे पूर्व शब्दों के आवरण के पीछे छिपी थी, वह ईश्वर की कृपा तथा उसकी दिव्य अनुकम्पा से प्रकट कर दी गई है। ठीक उसी समय जब प्रियतम के सौन्दर्य से दीप्तिमान प्रकाश फैला। हे मित्रो! मैं साक्षी हूँ कि अनुकम्पा पूर्ण हो चुकी है, तर्क पूरे किये जा चुके हैं, प्रमाण स्पष्ट हैं और साक्ष्य प्रमाणित हो चुका है। अब देखना यह है कि अनासक्ति की राह में तुम्हारे प्रयत्न क्या प्रकट करते हैं। इस प्रकार दिव्य अनुकम्पा पूर्ण रूप से तुमको और उनको जो धरती और आकाश में हैं प्रदान कर दी गई है। समस्त लोकों के स्वामी, ईश्वर की सर्व-स्तुति हो।